18 पापों के नाम

जैन धर्म के अनुसार, वैसे तो अनेक प्रकार के पाप होते हैं परन्तु फिर भी उनको संक्षिप्त रूप में 18 प्रकार से बताया जा सकता है, जो कि निम्नलिखित हैं:—

1.	हिंसा	Violence
2.	झूठ	Lie (Falsehood)
3.	चोरी	Stealing
4.	अब्रह्मचर्य	Non-Celibacy
5.	परिग्रह	Possession
6.	क्रोध	Anger
7.	मान (अहंकार)	Proud (Arrogant)
8.	माया (कपट)	Deceit (Deceptive)
9.	लोभ (लालच)	Greed
10.	राग	Attachement
11.	द्वेष	Hate
12.	कलह	Quarrel
13.	अभ्याख्यान(झूठा कंलक)	False Accusations
14.	पैशुन्य (चुगली)	Carrying Tales against Others
15.	पर परिवाद (निन्दा)	Being Pleased or Displeased with Trifles
16.	रति-अरति	Calumniating Others
17.	माया मृषावाद	Spreading Rumors or Scandals
18.	मित्थादर्शन शल्य	Believing in False Doctrines

एक सच्चे जैन गृहस्थ/श्रावक को उपर लिखित पापों से बचने का हर सम्भव प्रयास रखना चाहिए। तब ही हम भ. महावीर के सच्चे सिपाही कहलाएंगे।

जैन धर्म के सिद्धान्त

पिछली पुस्तक भाग-1 में हमने धर्म व जैन धर्म की परिभाषा को जाना व जैन धर्म के 3 मुख्य सिद्धान्तों के नामों को जाना। अब हम उनका विस्तृत वर्णन करेंगे।

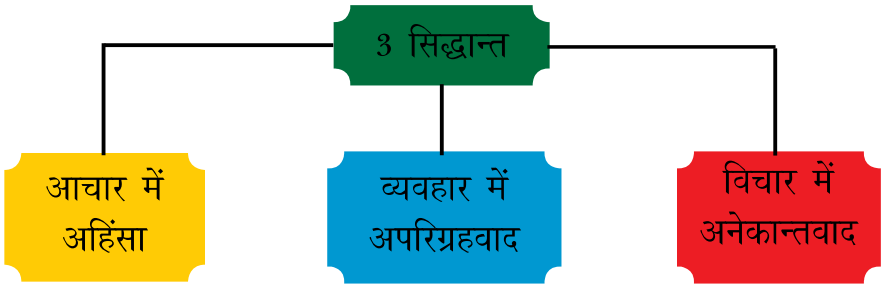

भ. महावीर ने मानव कल्याण हेतु तीन सिद्धान्त (Three Principle) इस दुनिया को दिए और अगर इन सिद्धान्तों का पालन सभी के द्वारा किया जाए तो हर प्राणी का कल्याण हो सकता है और हर जीव (प्राणी) सुख का अनुभव कर सकता है।

1. अहिंसा [Non Violence]: सभी जीवों (Living Being) के प्रति सयंम रखना, समभाव रखना अहिंसा है।

भ. महावीर ने फरमाया किः

किसी का भी वध मत करो, क्योंकि जिसे तुम मारना चाहते हो वह और कोई नहीं, तुम स्वयं हो। (सभी जीवों की आत्मा समान है) मैं सब जीवों को क्षमा (Forgive) करता हूं, सब जीव मुझे क्षमा करें। मेरी समस्त जीवों के प्रति मैत्री है, किसी से मेरा वैर नहीं है। सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता है। स्वयं जीओ और दूसरों को भी जीनो दो (Live & Let Live)।

जैसे हमें अगर कोई थोड़ी सी pin भी चुभो दे दो हमें कितनी पीड़ा होती है, उसी प्रकार जब हम किसी दूसरे जीव (Living Being) को मारते हैं, पीटते हैं या कष्ट देते हैं तो उन्हें पीड़ा होती है। जब हम स्वयं पीड़ा सहन नहीं करना चाहते हैं तो हमें कोई अधिकार नहीं है कि हम दूसरे को पीड़ा दें या उसका वध करें। किसी का वध करना या पीड़ा पहुँचाना नरक में जाने का कारण बनता है और वहां हमें दुःखों से कोई नहीं बचा सकता है। फिर हम वहां तड़फेंगे, चिल्लाएंगे, परन्तु बच नहीं पाएंगे। अतः हम अपने जीवन में भ. महावीर के अहिंसा के

सिद्धान्त को पालेंगे और कम से कम हम किसी निरपराधी जीव को नहीं मारेंगे और उसे कष्ट नहीं पहुंचाएंगे। अभय दान सबसे बड़ा दान भी है।

2. अपरिग्रहः इसका अर्थ है वस्तु के प्रति ममता और मूर्छा का अभाव। भ. महावीर ने कहा कि वस्तु परिग्रह नहीं है, अपितु वस्तु के प्रति आर्कषण (Attachments) परिग्रह है। आज समाजवाद (Socialist) और साम्यवाद (Capitalist) की चर्चा चल रही है, पर हमारी आशाए, आकांक्षाए (Hopes & Desires) आसमान को छूने लगी हैं। इन सब का समाधान करने के लिए भ. महावीर ने हमें एक व्रत दिया जिसे हम इच्छा परिणाम (Limiting the Desires) कहते हैं। अतः हमें वस्तुओं के प्रति कम से कम आकर्षण करना चाहिए।

भ. महावीर ने यह नहीं कहा कि आप आजीविका करते हुए धन एकत्रित न करो, अपितु उन्होंने यह कहा कि हमें अपनी आजीविका नैतिक तरीकों से चलानी चाहिए और अपनी आवश्यकताओं को पूरा करते हुए समाज के अन्य सदस्यों व राष्ट्र की आवश्यकताओं को भी पूरा करने का सद्पुरुषार्थ करें।

3. अनेकान्तवादः भ. महावीर ने कहा प्रत्येक घटना के अनेक रूप होते हैं। हम उस घटना के सभी रूपों को देखेंगे, तो हमारी सभी समस्याओं का समाधान हो जाऐगा। जब हम सोचते हैं कि "मैं ही ठीक हूँ, मैं ही सही हूँ" तब हम उस घटना के एक पहलू को देखते हैं और जब हम यह सोचते हैं कि "मैं ठीक हूँ, मैं सही हूँ और आप (तुम) भी सही हो सकते हो" तो इससे हम उस घटना के दूसरे पहलू को भी देखने की कोशिश कर रहे होते हैं, यही अनेकान्तवाद है। i.e. There are Many Dimensions of any Incident and if we Adopt this Principle in Our Life, it will Solve many Problem of the Universe.

अतः हमें किसी भी घटना, विचार, वस्तु को उसके विभिन्न पहलुओं से सोचना, देखना, विचारना चाहिए और तभी कोई पक्का निर्णय लेना चाहिए।

साधु के 5 महाव्रत

भगवान् महावीर ने किसी भी आत्मा को मोक्ष प्राप्त करने के लिए 2 मार्ग बताए हैं। एक है **अनगार मार्ग** और दूसरा है **आगार मार्ग**। इसको हम श्रमण-धर्म व श्रावक-धर्म से भी जानते हैं। साधु को श्रमण भी कहते हैं। भ. ने कहा कि अगर कोई निश्चित क्रियाओं (Certain Codes of Conduct) का पालन करे तो वह अपने 8 कर्मों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है। अतः साधु मार्ग पर चलने हेतु अपनाने वाले नियमों (Code & Conduct) को जैन साधु के 5 महाव्रत के नाम से जाना जाता है। अतः जब भी कोई व्यक्ति जैन साधु बनता है यानि जैन दीक्षा लेता है तो वह निम्नलिखित 5 नियमों (Code & Conduct) का जीवन भर पालन (Follow) करने की प्रतिज्ञा (Vow) लेता है।

1. अहिंसा महाव्रत (Non Violence Vow): जैसा कि हम जानते हैं कि लोक में जीतने भी जीव हैं, वे 4 गतियों में विभाजित किये जा सकते हैं। अतः साधु जीवन भर 4 गति के 84 लाख योनि (Sub-Category) के किसी भी प्रकार के (Small or Big in Size) जीव (Living Being) की हिंसा अपने मन से (Mind), वचन से (Speech), काया से, (Body) न तो स्वयं (Self) करता है, न करवाता है और न ही करने वाले की अनुमोदना, (समर्थन– Praise, Encourage) करता है। हम यह भी कह सकते हैं कि जैन साधु हिंसा के सम्भावित, 9 तरीकों (Ways) से बचता है।

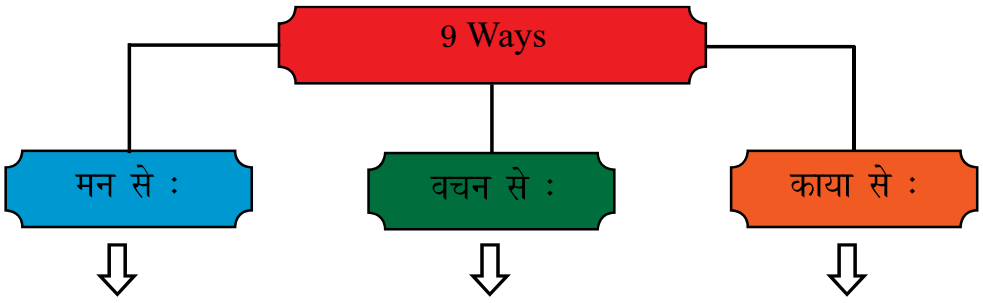

1 करना	1 करना	1 करना
2 करवाना	2 करवाना	2 करवाना
3 करने वाले का समर्थन करना	3 करने वाले का समर्थन करना	3 करने वाले का समर्थन करना

Total ways = 3+3+3=9

2. सत्य महाव्रत (Truth Vow): जैन साधु क्रोध (Anger) से, लोभ (Greed) से जीवन भर भय (Fear) या हंसी (Enjoyment) से कभी भी ऊपर लिखित 9 प्रकार (Ways) से झूठ नहीं बोलता है।

3. अचौर्य महाव्रत (Non-Stealing Vow): इस व्रत को अस्तेय महाव्रत भी कहते हैं। Owner की permission के बिना जैन साधु जीवन भर के लिए किसी का एक तिनका (Smallest Part of a Leaf) भी नहीं लेते हैं और ऊपर लिखित 9 प्रकार (Ways) से इसका पालन करते हैं।

4. ब्रह्मचर्य महाव्रत (Celibacy Vow): जैन साधु जीवन भर अपने से Opposite Sex के प्रति कोई आकर्षण (Attraction) नहीं रखते हैं। यहां तक कि वे उसे Touch भी नहीं करते हैं।

5. अपरिग्रह महाव्रत (Non-Possessiveness Vow): जैन साधु जीवन भर के लिए सिर्फ बहुत ही कम आवश्यक वस्त्र, पात्र आदि को छोड़कर किसी भी वस्तु के प्रति न कोई आकर्षण रखते हैं और न ही उनका सग्रंह (Collection) करते हैं और ऊपर लिखित 9 प्रकार (Ways) से इस महाव्रत का पालन करते हैं। They do not keep any Money, Ornaments, Cash or Property with them.

आत्मा का स्वरूप

- आत्मा का कोई रूप (Shape) नहीं है।
- आत्मा का कोई भार (Weight) नहीं है।
- आत्मा में सुगंध (Smell) या दुर्गंध (Bad Odour) नहीं है।
- आत्मा में गर्म (Hot) या ठंडा स्पर्श (Touch) नहीं है।
- आत्मा का मुलायम (Soft) या खुरदरा (Hard) स्पर्श नहीं है।
- आत्मा के लिए यश या अपयश नहीं है।
- आत्मा मोटा (Thick) या पलता (Slim) नहीं है।

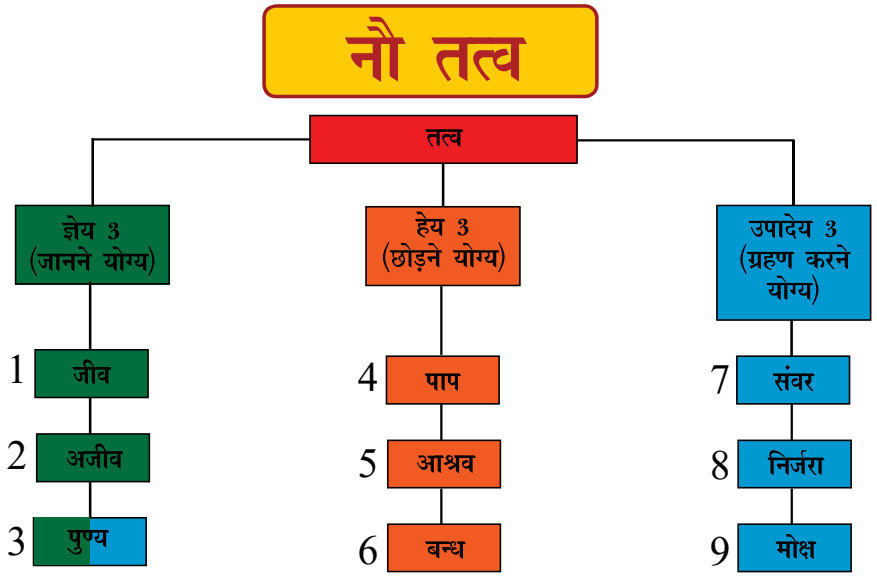

वैसे तो तत्व का अर्थ Facts है और किसी वस्तु की Nature को भी तत्व कहते हैं जैसे कि दूध को दूध कहना या जैसे अग्नि का स्वभाव गर्मी है। परन्तु जैन दर्शन को समझने के लिए जिन 9 Basic Elements (तत्वों) की जानकारी आवश्यक है, उन्हें हम 9 तत्व (Nine Elements) कहते हैं। जिनके नाम ऊपर लिखे गए हैं।

नव तत्व

प्र.1. तत्व किसे कहते हैं?

उ.1. सत्य वस्तु को तत्व कहते है, जैसे दूध को दूध कहना।

2. वस्तु का स्वभाव भी तत्व कहलाता है, जैसे अग्नि का स्वभाव उष्ण है, यह तत्व हुआ।

3. मोक्ष- प्राप्ति के लिए अवश्यक जानने-योग्य विषयों को तत्व कहते हैं। ये नौ हैं।

प्र.2. नौ तत्व कौन-कौन से हैं?

उ. जीव तत्व, अजीव तत्व, पुण्य तत्व, पाप तत्व, आस्रव तत्व, संवर तत्व, निर्जरा तत्व, बन्ध तत्व, मोक्ष तत्व।

प्र.3. नौ तत्वों की परिभाषा लिखिए।

उ.1 जीव- जो जीता है, प्राण धारण करता है, चेतना-शक्ति से सम्पन्न है, वह जीव कहलाता है, यथा- हाथी, घोड़ा, पशु, मनुष्य आदि।

2 अजीव- जो जीव का विरोधी तत्व है, अर्थात् जीवित नहीं रहता तथा चैतन्य शक्ति से रहित है, वह अजीव कहलाता है, जैसे- मेज, कुर्सी, पलंग आदि।

3 पुण्य- जिस शुभ क्रिया से जीव को कालान्तर में सुख मिलता है, वह पुण्य कहलाता है, जैसे- अन्न-दान, जल-दान, वस्त्र-दान आदि।

4 पाप- जिस अशुभ क्रिया से जीव को कालान्तर में दुख मिलता है, वह पाप कहलाता है, जैसे-हिंसा, झूठ, चोरी आदि।

5 आस्रव- जिन मार्गों से आत्मा में कर्मों का प्रवेश होता है, वे आस्रव कहलाते हैं, जैसे मिथ्यात्व (धर्म-विषयक विपरीत ज्ञान), अविरति (सांसारिक विषय-भोगों को न त्यागना), प्रमाद (धर्म-कार्यों में आलस्य), कषाय (क्रोध, मान माया, लोभ) आदि।

6 संवर- जिन मार्गों से आत्मा में कर्मों का प्रवेश रुकता है, वे संवर कहलाते हैं जैसे सम्यक्त्व, विरति, अप्रमाद, अकषाय आदि।

7 निर्जरा- आत्मा से लगे कर्मों का कुछ अंश में अलग होना निर्जरा कहलाती है। अनशन (अन्न, जल का त्याग) ऊनोदरी (भूख से कम खाना) आदि निर्जरा के उपाय हैं।

8 बन्ध- दूध और पानी की तरह, घी और खिचड़ी की तरह आत्मा और कर्मों का एकमेक होकर बंध जाना बन्ध कहलाता है।

9 मोक्ष- आत्मा से सम्पूर्ण कर्मों का पृथक् हो जाना मोक्ष कहलाता है। मोक्ष हो जाने के बाद आत्मा का जन्म-मरण-रूपी भव-भ्रमण समाप्त हो जाता है।

इन नौ तत्वों में जीव व अजीव ज्ञेय (जानने योग्य) संवर, निर्जरा व मोक्ष उपादेय (ग्रहण करने योग्य) हैं। पाप, आस्राव व बन्ध हेय (छोड़ने योग्य) हैं। **पुण्य तत्व गृहस्थ के लिए उपादेय है, परन्तु मुनियों के लिए ज्ञेय है।**

बत्तीस शास्त्र

जगत् के सब जीवों की रक्षा और दया के लिए तीर्थंकर भगवान धर्म-देशना देते हैं। भगवान की यह वाणी **सूत्र, शास्त्र या आगम** कहलाती है।

आगम के तीन भेद हैं- **सूत्रागम, अर्थागम और उभयागम**। 'धम्मो मंगलमुक्ट्ठिं' यह मूल पाठ सूत्रागम है। 'धर्म उत्कृष्ट मंगल है' यह अर्थागम है। दोनों मिलकर उभयागम या तदुभयागम कहलाते हैं। तीर्थंकर भगवान अर्थरूप आगम की देशना देते हैं, उनके प्रधान शिष्य (गणधर) उनको सूत्र-रूप में ग्रंथित करते हैं। इनके आधार पर कुछ विशिष्ट ज्ञानी आचार्य अन्य सूत्रों की भी रचना करते हैं।

तीर्थंकर प्रभु का सम्पूर्ण उपदेश **बारह अंगों** में समाविष्ट होता है। उस उपदेश को उनके गणधर यत्नपूर्वक संभाल कर रखते हैं, इसलिए सम्पूर्ण शास्त्र-भंडार **'द्वादशांग-गणि-पिटक'** कहलाता है।

भगवान महावीर स्वामी ने भी तीर्थ-स्थापना करते हुए गौतम आदि 11 गणधरों को द्वादशांग-वाणी का उपदेश दिया। वीर-निर्वाण के 1000 वर्ष बाद (सन् 473 ई.) 12वां अंग 'दृष्टिवाद' काल-प्रभाव से लुप्त हो गया। अन्य 11 आगमों के भी बहुत से पाठ समाप्त हो गए। सिन्धु में से बिन्दु-मात्र ही शेष रहा।

तीर्थंकरों का उपदेश गणधरों द्वारा मौखिक रूप से ग्रहण किया जाता है, जो गुरु-शिष्य-परम्परा द्वारा आगे से आगे प्रचारित होता है। आगम ज्ञान की इस निधि (खजाना) को संभालने/व्यवस्थित करने या लिपिबद्ध करने के लिए इतिहास में तीन प्रयास हुए हैं।

प्रथम प्रयास वीर निर्वाण संवत् 160 वर्ष के लगभग नेपाल देश में हुआ, जब आचार्य भद्रबाहु ने स्थूल-भद्र मुनि को 14 पूर्वों का ज्ञान दिया। द्वितीय प्रयास वीर नि. 827 (सन् 300) में हुआ। तृतीय प्रयास वीर निर्वाण संवत् 980 (सन् 453) में आचार्य देवद्धिगणी क्षमाश्रमण के नेतृत्व में वलभी नगरी (गुजरात) में

हुआ। इसमें लगभग 84 जैन आगमों को व्यवस्थित करके लिपिबद्ध किया गया। वर्तमान में 11 अंग एवं 21 अन्य, कुल 32 आगम उपलब्ध हैं। इनकी भाषा अर्धमागधी प्राकृत है। स्थानकवासी व तेरापन्थी सम्प्रदाय इनको मान्य करते हैं। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक इन 32 के अतिरिक्त 13 और आगम मानते हैं। अतः वे कुल 45 आगम मानते हैं।

32 आगम पाँच भागों में विभक्त हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं:—

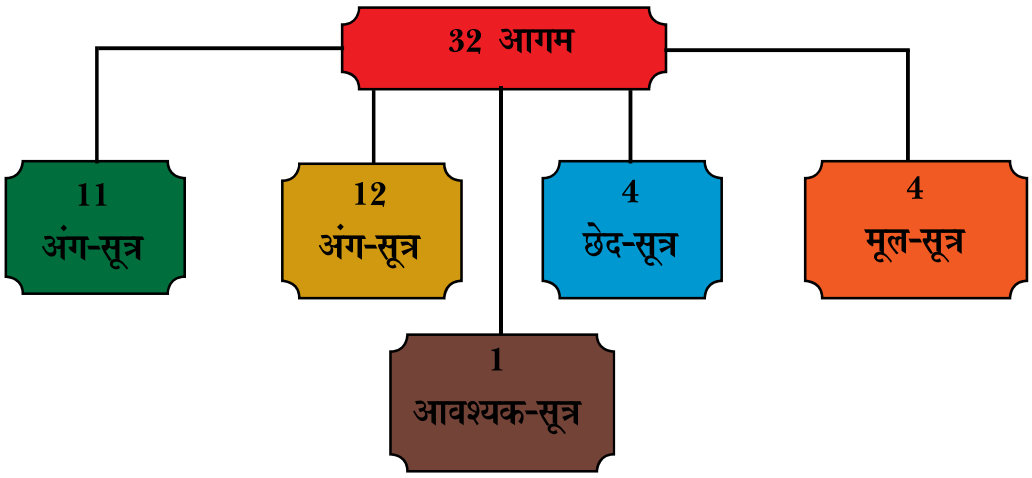

11 अंग-सूत्र- 1. आचारांग, 2. सूत्रकृतांग, 3. स्थानांग, 4. समवायांग, 5. व्याख्या-प्रज्ञप्ति (भगवती), 6. ज्ञाताधर्म-कथांग 7. उपासक-दशांग 8. अन्तकृद्-दशांग 9. अनुत्तरोपपातिक 10. प्रश्न-व्याकरण 11. विपाक।

12 अंग-सूत्र- 1. उववाई, 2. राय-पसेणी, 3. जीवाजीवाभिगम, 4. प्रज्ञापना, 5. जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति, 6. चन्द्र-प्रज्ञप्ति, 7. सूर्य-प्रज्ञप्ति, 8. निरयावलिया, 9. कप्पवडंसिया, 10. पुप्फिया, 11. पुप्फचूलिया, 12. वण्हिदसा।

4 छेद-सूत्र- 1. व्यवहार, 2. बृहत्कल्प, 3. निशीथ, 4. दशा-श्रुतस्कन्ध।

4 मूल-सूत्र- 1. दशवैकालिक, 2. उत्तराध्ययन, 3. नन्दी, 4. अनुयोगद्वार।

1 आवश्यक-सूत्र।

इन 32 शास्त्रों के मूल, अर्थ या उभय (दोनों) का स्वाध्याय करने से ज्ञानावरण-कर्म का क्षय होता है, मोहनीय कर्म की शृंखलाएं टूटती हैं। और आत्मा विकास करती-करती अरिहन्त और सिद्ध अवस्था को प्राप्त करती है।